डाउनलोड मुद्रण

बाल साहित्य अ+ अ-

छोटा जादूगर

जयशंकर प्रसाद

कार्निवल के मैदान में बिजली जगमगा रही थी। हँसी और विनोद का कलनाद गूँज रहा था। मैं खड़ा था उस छोटे फुहारे के पास, जहाँ एक लड़का चुपचाप शराब पीनेवालों को देख रहा था। उसके गले में फटे कुरते के ऊपर से एक मोटी-सी सूत की रस्सी पड़ी थी और जेब में कुछ ताश के पत्ते थे। उसके मुँह पर गंभीर विषाद के साथ धैर्य की रेखा थी। मैं उसकी ओर न जाने क्यों आकर्षित हुआ। उसके अभाव में भी संपन्नता थी।

मैंने पूछा, "क्यों जी, तुमने इसमें क्या देखा?"

"मैंने सब देखा है। यहाँ चूड़ी फेंकते हैं। खिलौनों पर निशाना लगाते हैं। तीर से नंबर छेदते हैं। मुझे तो खिलौनों पर निशाना लगाना अच्छा मालूम हुआ। जादूगर तो बिलकुल निकम्मा है। उससे अच्छा तो ताश का खेल मैं ही दिखा सकता हूँ।" उसने बड़ी प्रगल्भता से कहा। उसकी वाणी में कहीं रूकावट न थी।

मैंने पूछा, "और उस परदे में क्या है? वहाँ तुम गए थे?"

"नहीं, वहाँ मैं नहीं जा सका। टिकट लगता है।"

मैंने कहा, "तो चलो, मैं वहाँ पर तुमको लिवा चलूँ।" मैंने मन-ही-मन कहा, 'भाई! आज के तुम्हीं मित्र रहे।'

उसने कहा, "वहाँ जाकर क्या कीजिएगा? चलिए, निशाना लगाया जाए।"

मैंने उससे सहमत होकर कहा, "तो फिर चलो, पहले शरबत पी लिया जाए।" उसने स्वीकार-सूचक सिर हिला दिया।

मनुष्यों की भीड़ से जाड़े की संध्या भी वहाँ गरम हो रही थी। हम दोनों शरबत पीकर निशाना लगाने चले। राह में ही उससे पूछा, "तुम्हारे घर में और कौन हैं?"

"माँ और बाबूजी।"

"उन्होंने तुमको यहाँ आने के लिए मना नहीं किया?"

"बाबूजी जेल में हैं।"

"क्यों?"

"देश के लिए।" वह गर्व से बोला।

"और तुम्हारी माँ?"

"वह बीमार है।"

"और तुम तमाशा देख रहे हो?"

उसके मुँह पर तिरस्कार की हँसी फूट पड़ी। उसने कहा, "तमाशा देखने नहीं, दिखाने निकला हूँ। कुछ पैसे ले जाऊँगा, तो माँ को पथ्य दूँगा। मुझे शरबत न पिलाकर आपने मेरा खेल देखकर मुझे कुछ दे दिया होता, तो मुझे अधिक प्रसन्नता होती!"

मैं आश्चर्य से उस तेरह-चौदह वर्ष के लड़के को देखने लगा।

"हाँ, मैं सच कहता हूँ बाबूजी! माँजी बीमार हैं, इसीलिए मैं नहीं गया।"

"कहाँ?"

"जेल में! जब कुछ लोग खेल-तमाशा देखते ही हैं, तो मैं क्यों न दिखाकर माँ की दवा करूँ और अपना पेट भरूँ।"

मैंने दीर्घ नि:श्वास लिया। चारों ओर बिजली के लट्टू नाच रहे थे। मन व्यग्र हो उठा। मैंने उससे कहा, "अच्छा चलो, निशाना लगाया जाए।"

हम दोनों उस जगह पर पहुँचे जहाँ खिलौने को गेंद से गिराया जाता था। मैंने बारह टिकट खरीदकर उस लड़के को दिए।

वह निकला पक्का निशानेबाज। उसकी कोई गेंद खाली नहीं गई। देखनेवाले दंग रह गए। उसने बारह खिलौनों को बटोर लिया, लेकिन उठाता कैसे? कुछ मेरी रूमाल में बँधे, कुछ जेब में रख लिये गए।

लड़के ने कहा, "बाबूजी, आपको तमाशा दिखाऊँगा। बाहर आइए, मैं चलता हूँ।" वह नौ-दो ग्यारह हो गया। मैंने मन-ही-मन कहा, 'इतनी जल्दी आँख बदल गई!"

में घूमकर पान की दुकान पर आ गया। पान खाकर बड़ी देर तक इधर-उधर टहलता-देखता रहा। झूले के पास लोगों का ऊपर-नीचे आना देखने लगा। अकस्मात् किसी ने ऊपर के हिंडोले से पुकारा, "बाबूजी!"

मैंने पूछा, "कौन?"

"मैं हूँ छोटा जादूगर।"

+

कलकत्ते के सुरम्य बोटैनिकल-उद्यान में लाल कमलिनी से भरी हुई एक छोटी-सी झील के किनारे घने वृक्षों की छाया में अपनी मंडली के साथ बैठा हुआ मैं जलपान कर रहा था। बातें हो रही थीं। इतने में वही छोटा जादूगर

दिखाई पड़ा। हाथ में चारखाने का खादी का झोला, साफ जाँघिया और आधी बाँहों का कुरता। सिर पर मेरी रूमाल सूत की रस्सी से बँधी हुई थी। मस्तानी चाल में झूमता हुआ आकर वह कहने लगा -

"बाबूजी, नमस्ते! आज कहिए तो खेल दिखाऊँ?"

"नहीं जी, अभी हम लोग जलपान कर रहे हैं।"

"फिर इसके बाद क्या गाना-बजाना होगा, बाबूजी?"

"नहीं जी, तुमको...." क्रोध से मैं कुछ और कहने जा रहा था। श्रीमतीजी ने कहा, "दिखलाओ जी, तुम तो अच्छे आए। भला, कुछ मन तो बहले।" मैं चुप हो गया, क्योंकि श्रीमतीजी की वाणी में वह माँ की-सी मिठास थी, जिसके सामने किसी भी लड़के को रोका नहीं जा सकता। उसने खेल आरंभ किया।

उस दिन कार्निवल के सब खिलौने उसके खेल में अपना अभिनय करने लगे। भालू मनाने लगा। बिल्ली रूठने लगी। बंदर घुड़कने लगा। गुड़िया का ब्याह हुआ। गुड्डा वर काना निकला। लड़के की वाचालता से ही अभिनय हो रहा था। सब हँसते लोट-पोट हो गए।

मैं सोच रहा था। बालक को आवश्यकता ने कितना शीघ्र चतुर बना दिया। यही तो संसार है।

ताश के सब पत्ते लाल हो गए। फिर सब काले हो गए। गले की सूत की डोरी टुकड़े-टुकड़े होकर जुड़ गई। लट्टू अपने से नाच रहे थे। मैंने कहा, "अब हो चुका। अपना खेल बटोर लो, हम लोग भी अब जाएँगे।"

श्रीमतीजी ने धीरे से उसे एक रूपया दे दिया। वह उछल उठा।

मैंने कहा, "लड़के!"

"छोटा जादूगर कहिए। यही मेरा नाम है। इसी से मेरी जीविका है।"

मैं कुछ बोलना ही चाहता था कि श्रीमतीजी ने कहा, "अच्छा, तुम इस रुपए से क्या करोगे?"

"पहले भरपेट पकौड़ी खाऊँगा। फिर एक सूती कंबल लूँगा।"

मेरा क्रोध अब लौट आया। मैं अपने पर बहुत क्रुद्ध होकर सोचने लगा, 'ओह! कितना स्वार्थी हूँ मैं। उसके एक रुपया पाने पर मैं ईर्ष्या करने लगा था न!"

वह नमस्कार करके चला गया। हम लोग लता-कुंज देखने के लिए चले।

उस छोटे से बनावटी जंगल में संध्या साँय-साँय करने लगी थी। अस्ताचलगामी सूर्य की अंतिम किरण वृक्षों की पत्तियों से विदाई ले रही थी। एक शांत वातावरण था। हम लोग धीरे-धीरे मोटर से हावड़ा की ओर आ रहे थे।

रह-रहकर छोटा जादूगर स्मरण हो आता था। तभी सचमुच वह एक झोंपड़ी के पास कंबल कंधे पर डाले मिल गया। मैंने मोटर रोककर उससे पूछा, "तुम यहाँ कहाँ?"

"मेरी माँ यहीं है न! अब उसे अस्पताल वालों ने निकाल दिया है।" मैं उतर गया। उस झोंपड़ी में देखा तो एक स्त्री चिथड़ों से लदी हुई काँप रही थी।

छोटे जादूगर ने कंबल ऊपर से डालकर उसके शरीर से चिमटते हुए कहा, "माँ!"

मेरी आँखों से आँसू निकल पड़े।

+

बड़े दिन की छुट्टी बीत चली थी। मुझे अपने ऑफिस में समय से पहुँचना था। कलकत्ते से मन ऊब गया था। फिर भी चलते-चलते एक बार उस उद्यान को देखने की इच्छा हुई। साथ-ही-साथ जादूगर भी दिखाई पड़ जाता तो और भी.... मैं उस दिन अकेले ही चल पड़ा। जल्द लौट आना था।

दस बज चुके थे। मैंने देखा कि उस निर्मल धूप में सड़क के किनारे एक कपड़े पर छोटे जादूगर का रंगमंच सजा था। मैं मोटर रोककर उतर पड़ा। वहाँ बिल्ली रूठ रही थी। भालू मनाने चला था। ब्याह की तैयारी थी, यह सब होते हुए भी जादूगर की वाणी में वह प्रसन्नता की तरी नहीं थी। जब वह औरों को हँसाने की चेष्टा कर रहा था, तब जैसे स्वयं काँप जाता था। मानो उसके रोएँ रो रहे थे। मैं आश्चर्य से देख रहा था। खेल हो जाने पर पैसा बटोरकर उसने भीड़ में मुझे देखा। वह जैसे क्षण भर के लिए स्फूर्तिमान हो गया। मैंने उसकी पीठ थपथपाते हुए पूछा, "आज तुम्हारा खेल जमा क्यों नहीं?"

"माँ ने कहा है कि आज तुरंत चले आना। मेरी अंतिम घड़ी समीप है।" अविचल भाव से उसने कहा।

"तब भी तुम खेल दिखलाने चले आए!" मैंने कुछ क्रोध से कहा। मनुष्य के सुख-दु:ख का माप अपना ही साधन तो है। उसके अनुपात से वह तुलना करता है।

उसके मुँह पर वहीं परिचित तिरस्कार की रेखा फूट पड़ी।

उसने कहा, "क्यों न आता?"

और कुछ अधिक कहने में जैसे वह अपमान का अनुभव कर रहा था।

क्षण भर में मुझे अपनी भूल मालूम हो गई। उसके झोले को गाड़ी में फेंककर उसे भी बैठाते हुए मैंने कहा, "जल्दी चलो।" मोटरवाला मेरे बताए हुए पथ पर चल पड़ा।

कुछ ही मिनटों में मैं झोंपड़े के पास पहुँचा। जादूगर दौड़कर झोंपड़े में माँ-माँ पुकारते हुए घुसा। मैं भी पीछे था, किंतु स्त्री के मुँह से, 'बे...' निकलकर रह गया। उसके दुर्बल हाथ उठकर गिर गए। जादूगर उससे लिपटा रो रहा था। मैं स्तब्ध था। उस उज्ज्वल धूप में समग्र संसार जैसे जादू-सा मेरे चारों ओर नृत्य करने लगा।

शीर्ष पर जाएँ